International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.141 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-13, Issue-2 | November - December 2025

Original Article

हाशिये से मुख्यधारा तक: बिहार में दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण में सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थानों की भूमिका का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

अनिल कुमार
शोधार्थी
भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार

Manuscript ID:
IJAAR-130224

ISSN: 2347-7075
Impact Factor – 8.141

Volume - 13
Issue - 2
November - December 2025
Pp. 144 - 154

Submitted: 21 Dec 2025
Revised: 29 Dec 2025
Accepted: 30 Dec 2025
Published: 1 Jan 2026

Corresponding Author:
अनिल कुमार

Quick Response Code:

Website: https://ijaar.co.in/

DOI:
10.5281/zenodo.18481092

DOI Link:
https://doi.org/10.5281/zenodo.18481092

Creative Commons

सारांश:

विकास की समावेशी प्रक्रिया में दिव्यांगजनों (*Persons with Disabilities*) की भागीदारी सुनिश्चित करना किसी भी लोकतांत्रिक समाज की प्राथमिकता होनी चाहिए। बिहार जैसे सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े राज्य में यह चुनौती और भी जटिल हो जाती है। यह अध्ययन राज्य स्तरीय संस्थानों जैसे बिहार राज्य दिव्यांगजन आयोग, एवं गैर-सरकारी संगठनों जैसे 'विकलांग विकास संस्थान' और 'नशा मुक्ति परिषद' की भूमिका का मूल्यांकन करता है।

इस शोध का उद्देश्य सरकारी योजनाओं जैसे दिव्यांगजन स्वरोजगार योजना, समावेशी शिक्षा कार्यक्रम, एवं कौशल विकास प्रशिक्षणों के प्रभाव और क्रियान्वयन की पड़ताल करना है। शोध के अंतर्गत गया और पटना जिलों में किए गए केस स्टडीज के माध्यम से यह देखा गया कि प्रशासनिक जटिलताएं, सामाजिक दृष्टिकोण, और भौतिक संरचनाओं की कमी इन योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू करने में बाधा बनती हैं। साथ ही, यह अध्ययन यह भी दर्शाता है कि कैसे स्थानीय गैर-सरकारी संगठन जमीनी स्तर पर जागरूकता, अधिकारों की जानकारी, और सामाजिक समावेश की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। समाजशास्त्रीय रूपरेखा के अंतर्गत इस शोध में "सामाजिक विरलटन" (*Alienation*) और "क्षमता दृष्टिकोण" (*Capability Approach - Amartya Sen*) का प्रयोग किया गया है।

अंततः, शोध इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि विकेंद्रीकृत, अधिकार-आधारित और उत्तरदायी नीतियां ही दिव्यांगजनों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ सकती हैं।

कीवर्ड्स: दिव्यांग अधिकार, बिहार, सामाजिकविरलटन, सरकारी-गैर सरकारी सहयोग, सशक्तिकरण

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), *which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.*

How to cite this article:
अनिल कुमार. (2025). हाशिये से मुख्यधारा तक: बिहार में दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण में सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थानों की भूमिका का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन. International Journal of Advance and Applied Research, 13(2), 144–154. https://doi.org/10.5281/zenodo.18481092

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.141 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-13, Issue-2 | November - December 2025

परिचय:

दिव्यांगजनों की स्थिति पर राष्ट्रीय और राज्य स्तर की पृष्ठभूमि:

भारत में दिव्यांगजनों को लंबे समय तक उपेक्षा, कलंक (stigma), और सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ा है। हालाँकि स्वतंत्रता के बाद विशेष रूप से 1990 के दशक से उनके अधिकारों की सुरक्षा और समावेशन को लेकर नीति-निर्माण में सक्रियता दिखाई दी है।

राष्ट्रीय स्तर पर, दिव्यांगजनों के अधिकारों की दिशा में पहला बड़ा कदम 1995 में *The Persons with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Act* के रूप में आया। इस अधिनियम ने शिक्षा, रोजगार, और सार्वजनिक स्थानों तक पहुँच जैसे क्षेत्रों में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए विशेष प्रावधान किए (GOI, 1995)।[1]

इसके पश्चात 2016 में इसे और व्यापक बनाते हुए *The Rights of Persons with Disabilities Act* पारित किया गया, जो कि भारत द्वारा *UN Convention on the Rights of Persons with Disabilities (UNCRPD, 2006)* के अनुसमर्थन के बाद अस्तित्व में आया। इस अधिनियम में दिव्यांगताओं की संख्या 7 से बढ़ाकर 21 कर दी गई, और शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीतिक भागीदारी व सामाजिक सुरक्षा से संबंधित सशक्त प्रावधान जोड़े गए (Ministry of Social Justice and Empowerment, 2016)।[2]

UDID (Unique Disability ID) परियोजना, जो 2016 में शुरू हुई, दिव्यांगजनों के डेटा संग्रहण, पहचान, और सेवाओं की पारदर्शिता बढ़ाने का प्रयास है। यह डिजिटल मंच *स्वावलंबन पोर्टल* से जुड़ा है, जिससे योजनाओं का लाभ लक्षित लाभार्थियों तक पहुँच सके (Department of Empowerment of Persons with Disabilities, 2020)।

राज्य स्तर पर, बिहार सरकार ने दिव्यांगजनों के लिए कई योजनाएं चलाई हैं, जैसे:

- दिव्यांग छात्रवृत्ति योजना (Class I से उच्च शिक्षा तक)
- *Artificial Limb Manufacturing Corporation of India* के माध्यम से कृत्रिम अंग और ट्राईसाईकिल वितरण
- *Inclusive Education for Disabled at Secondary Stage (IEDSS)* योजना के तहत विशेष शिक्षा सुविधा
- हर ज़िले में *District Disability Rehabilitation Centres (DDRCs)* की स्थापना
- NGO-सरकारी भागीदारी कार्यक्रम (Public-Private Partnership Model)

बावजूद इसके, *Centre for Disability Studies and Action (TISS, 2021)* के अनुसार, बिहार में योजनाओं की पहुँच और क्रियान्वयन में कई चुनौतियाँ हैं – जैसे:

- लाभार्थियों की पहचान में विसंगति

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.141 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-13, Issue-2 | November - December 2025

- बिचौलियों की भूमिका
- संस्थानों की सीमित संख्या
- ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता की कमी

यह भी देखा गया है कि बिहार में दिव्यांग प्रमाण पत्र प्राप्त करने की प्रक्रिया आज भी जटिल और अस्पष्ट है, जिससे लाभार्थी योजनाओं से वंचित रह जाते हैं (Das & Singh, 2020)।[3]

इस शोध की आवश्यकता इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह न केवल सरकारी योजनाओं और नीतियों की समीक्षा करता है, बल्कि यह भी विश्लेषण करता है कि किस हद तक दिव्यांगजन समाज की मुख्यधारा में शामिल हो पा रहे हैं — शिक्षा, रोजगार, और सामाजिक पहचान के स्तर पर।

शोध की आवश्यकता:

भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या का लगभग 2.21% (लगभग 2.68 करोड़) लोग दिव्यांग श्रेणी में आते हैं। इनमें से बिहार में ही लगभग 23 लाख दिव्यांगजन निवास करते हैं, जो राज्य की कुल जनसंख्या का लगभग 2.5% है (Census of India, 2011)। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि दिव्यांगजन बिहार की सामाजिक संरचना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं।

हालांकि, बिहार में दिव्यांगजनों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति अभी भी अत्यंत दयनीय है। *National Sample Survey (76th Round, 2018)* के अनुसार, दिव्यांग व्यक्तियों की साक्षरता दर बिहार में 49% से भी कम है, जो राष्ट्रीय औसत से नीचे है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति और भी गंभीर है, जहाँ न तो पर्याप्त विशेष विद्यालय हैं और न ही सहायक उपकरणों की उपलब्धता सुनिश्चित की गई है।

इसके साथ ही, सरकार की कई योजनाएं – जैसे छात्रवृत्ति, पुनर्वास केंद्र, UDID कार्ड वितरण, कृत्रिम अंग योजना – *नीति स्तर पर मौजूद होने के बावजूद* जमीनी स्तर पर वांछित प्रभाव नहीं छोड़ पा रही हैं। *Das & Singh (2020)* के अनुसार, लाभार्थियों को योजनाओं की जानकारी नहीं होती, और पंजीकरण की प्रक्रिया कठिन व भ्रष्टाचार-प्रवण है।

बिहार जैसे राज्य में, जहाँ सामाजिक न्याय और कल्याण की नीतियाँ ऐतिहासिक रूप से राजनीतिक विमर्श का हिस्सा रही हैं, दिव्यांगजनों के मुद्दे हाशिये पर रहे हैं। *Jha (2022)* बताती हैं कि विकलांगता को अभी भी "करुणा" या "दान" की दृष्टि से देखा जाता है, न कि अधिकार आधारित ढांचे के तहत।[4]

इसके अतिरिक्त, बिहार में NGO, निजी संस्थानों और सामुदायिक भागीदारी की भूमिका को लेकर भी पर्याप्त शोध उपलब्ध नहीं है। अधिकांश अध्ययनों का ध्यान केवल सरकारी योजनाओं पर केंद्रित रहा है, जबकि यह आवश्यक है कि इन योजनाओं के क्रियान्वयन में *गैर-सरकारी संस्थानों की भागीदारी* और *दिव्यांगजनों के व्यक्तिगत अनुभव* को भी समीक्षित किया जाए।

इस अध्ययन की आवश्यकता इसलिए है ताकि:

- बिहार में दिव्यांगजनों की यथास्थिति को समग्र रूप से समझा जा सके।

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.141 | Website: https://ijaar.co.in/
Volume-13, Issue-2 | November - December 2025

- सरकारी व गैर-सरकारी प्रयासों की तुलना और प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जा सके।
- साक्ष्य-आधारित नीति सुझाव प्रस्तुत किए जा सकें।

मुख्य शोध प्रश्न:

इस अध्ययन को निम्नलिखित दो प्रमुख शोध प्रश्नों के आलोक में संचालित किया जा रहा है:

1. बिहार राज्य में दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण एवं सामाजिक समावेशन के लिए संचालित सरकारी और गैर-सरकारी योजनाओं की पहुँच, प्रभावशीलता एवं पारदर्शिता किस हद तक सफल रही है?

यह प्रश्न उन कार्यक्रमों, योजनाओं और संस्थागत तंत्रों की गहन समीक्षा करता है जो दिव्यांगजनों की शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका और सामाजिक सहभागिता को बढ़ाने के लिए अस्तित्व में हैं। इसमें सरकारी योजनाओं के साथ-साथ NGOs की भागीदारी और समुदाय-आधारित प्रयासों का तुलनात्मक मूल्यांकन भी किया जाएगा।

2. बिहार के विभिन्न सामाजिक-आर्थिक और भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों की सामाजिक, शैक्षणिक, और आर्थिक चुनौतियाँ किस प्रकार भिन्न हैं, और वे किन रणनीतियों को अपनाकर अपनी स्थिति सुधारने की कोशिश कर रहे हैं?

यह प्रश्न दिव्यांगजनों के अनुभवजन्य साक्ष्यों के माध्यम से यह समझने की कोशिश करता है कि कैसे जाति, वर्ग, लिंग, और स्थान (ग्रामीण/शहरी) जैसे आयाम उनके जीवन को प्रभावित करते हैं। साथ ही यह भी जानने का प्रयास है कि स्थानीय स्तर पर किस प्रकार के नवाचार या वैकल्पिक मॉडल उभर रहे हैं।

सैद्धांतिक ढाँचा:

इस अध्ययन की आधारशिला दो प्रमुख समाजशास्त्रीय सिद्धांतों पर आधारित है:

1. मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण (Rights-Based Approach):

यह दृष्टिकोण विकलांगता को *"अधिकारों के अभाव"* के रूप में देखता है, न कि व्यक्तिगत त्रुटि या चिकित्सा समस्या के रूप में। *United Nations Convention on the Rights of Persons with Disabilities (UNCRPD, 2006)* के अनुसार, दिव्यांगजन को स्वतंत्रता, शिक्षा, स्वास्थ्य, और राजनीतिक भागीदारी के समान अधिकार मिलने चाहिए।

यह दृष्टिकोण इस शोध में मदद करता है कि हम दिव्यांगजनों की सामाजिक स्थिति का विश्लेषण "कल्याणकारी दृष्टिकोण" से नहीं, बल्कि "सशक्तिकरण के अधिकार" के आधार पर करें।[5]

2. समाजशास्त्रीय कार्यात्मक सिद्धांत (Structural Functionalism – Emile Durkheim, Talcott Parsons):

इस सिद्धांत के अनुसार समाज एक समन्वित प्रणाली है, जहाँ हर संस्था (जैसे शिक्षा, परिवार, राज्य) एक विशेष कार्य करती है। यदि कोई हिस्सा ठीक से काम नहीं करता (जैसे दिव्यांगों के लिए शिक्षा व्यवस्था), तो संपूर्ण सामाजिक संरचना असंतुलित हो जाती है। इस संदर्भ में दिव्यांगजन समाज के एक "मार्जिनलाइज्ड" समूह के रूप में देखे जाते हैं, जिनकी उपेक्षा से सामाजिक असंतुलन उत्पन्न होता है। यह

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.141 | Website: https://ijaar.co.in/
Volume-13, Issue-2 | November - December 2025

फ्रेमवर्क इस बात को समझने में सहायक है कि संस्थागत विफलताएँ दिव्यांगजनों के जीवन पर कैसे प्रभाव डालती हैं।[6]

3. विकलांगता का सामाजिक मॉडल (Social Model of Disability):

यह मॉडल मानता है कि विकलांगता व्यक्ति में नहीं, बल्कि समाज की संरचना में निहित है। यानी अगर कोई व्यक्ति चल नहीं सकता, तो यह उसकी "निष्क्रियता" नहीं बल्कि उस समाज की असफलता है, जो व्हीलचेयर-रैंप जैसी मूलभूत सुविधाएं नहीं देता।

इस मॉडल को अपनाकर यह अध्ययन बिहार की योजनाओं, सार्वजनिक भवनों, शिक्षा संस्थानों और सरकारी नीतियों की समीक्षा करता है कि वे दिव्यांगजनों की आवश्यकताओं को किस हद तक समावेशी बना पाए हैं।[7]

सिद्धांतों का अनुप्रयोग: इन सिद्धांतों के ज़रिए इस शोध में संस्थागत असमानताओं, सामाजिक दृष्टिकोणों और नीति संरचनाओं को समझने और विश्लेषित करने की कोशिश की जाएगी।

शोध पद्धति:

यह अध्ययन एक मिश्रित पद्धति (Mixed Method) पर आधारित है, जिसमें मात्रात्मक (quantitative) और गुणात्मक (qualitative) दोनों ही अनुसंधान दृष्टिकोणों का समावेश किया गया है। इस पद्धति का उद्देश्य बिहार में दिव्यांगजनों की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्थिति का बहुआयामी मूल्यांकन करना है तथा यह समझना है कि राज्य सरकार और गैर-सरकारी संस्थानों की योजनाएँ व कार्यक्रम किस हद तक प्रभावी सिद्ध हुए हैं।

मात्रात्मक दृष्टिकोण के अंतर्गत योजनाओं की पहुँच, लाभार्थियों की संख्या, छात्रवृत्ति प्राप्त करने वाले छात्रों की दर, कृत्रिम अंग वितरण की आँकड़े आधारित जानकारी तथा पुनर्वास केंद्रों में नामांकित दिव्यांगजनों से संबंधित आँकड़ों को संकलित कर उनका विश्लेषण किया जाएगा। इसके लिए सेकेंडरी डेटा के स्रोत जैसे बिहार सरकार की सामाजिक कल्याण विभाग की रिपोर्टें, योजना पोर्टल (जैसे e-Shakti), UDID डेटा, तथा केंद्र सरकार की *NSS 76th Round* और *Census 2011* की रिपोर्टों का उपयोग किया जाएगा।

गुणात्मक दृष्टिकोण के तहत, लाभार्थी दिव्यांगजन, NGO कार्यकर्ता, जिला पुनर्वास केंद्र के अधिकारी, और विशेष शिक्षा संस्थानों के प्रतिनिधियों से अर्ध-संरचित साक्षात्कार (semi-structured interviews) लिए जाएँगे। इसके अतिरिक्त, फोकस ग्रुप चर्चाओं (Focus Group Discussions) और मैदानी अवलोकन (Field Observation) की विधियों के माध्यम से योजनाओं की ज़मीनी हकीकत को समझने की कोशिश की जाएगी।

नमूना चयन की प्रक्रिया *Purposive Sampling* पर आधारित होगी, जिसके तहत चार चयनित जिलों – पटना (शहरी), नालंदा (ग्रामीण), दरभंगा, और गया – से 40 लाभार्थियों का चयन किया जाएगा, जिनमें लिंग, जाति और भौगोलिक विविधता को सुनिश्चित किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, विशेषज्ञ साक्षात्कार के लिए NGO

प्रतिनिधियों और जिला स्तर के प्रशासनिक अधिकारियों को सम्मिलित किया जाएगा।

डेटा विश्लेषण की प्रक्रिया में, मात्रात्मक आँकड़ों का विश्लेषण *SPSS* और *Excel* के माध्यम से किया जाएगा, जिसमें फ्रीक्वेंसी डिस्ट्रिब्यूशन, क्रॉस-टैबुलेशन, तथा प्रतिशत विश्लेषण शामिल होगा। वहीं, गुणात्मक डेटा को *Thematic Analysis* तकनीक द्वारा वर्गीकृत किया जाएगा, जिससे विभिन्न पैटर्न, दृष्टिकोण और अनुभवों को समझा जा सके। इस प्रकार, यह शोध पद्धति एक व्यापक और बहुस्रोत पर आधारित दृष्टिकोण अपनाते हुए बिहार में दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण की वास्तविक स्थिति का बहुपरतीय मूल्यांकन करेगी।

समीक्षा साहित्य:

भारत में विकलांगता पर सामाजिक अनुसंधान का इतिहास अपेक्षाकृत नया है। प्रारंभिक अध्ययन प्रायः चिकित्सकीय दृष्टिकोण पर केंद्रित रहे, जहाँ विकलांगता को व्यक्तिगत समस्या या पुनर्वास योग्य शारीरिक कमी के रूप में देखा गया। किंतु 21वीं सदी के आरंभिक दशकों में यह दृष्टिकोण बदलता दिखा और विकलांगता को सामाजिक संरचनाओं और नीतिगत विफलताओं से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति बढ़ी।

Shakespeare (2006) द्वारा प्रतिपादित *Social Model of Disability* के अनुसार विकलांगता का मुख्य कारण व्यक्ति की सीमाएँ नहीं बल्कि समाज की संरचनात्मक बाधाएँ होती हैं।[8] भारत में भी इस सिद्धांत का प्रभाव बढ़ा है, जिससे नीति निर्माण में अधिक समावेशिता की माँग उठने लगी है। इसी सन्दर्भ में **Ghai (2002)** ने भारत में विकलांगता के संदर्भ को जाति, लिंग और वर्ग के साथ जोड़ते हुए तर्क दिया कि दिव्यांगजनों की स्थिति को केवल शारीरिक कमी नहीं, बल्कि सामाजिक बहिष्करण की प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए।[9]

Addlakha (2009) ने अपने शोध में इंगित किया कि भारत में विकलांगता नीति अक्सर "कल्याणकारी" दृष्टिकोण से प्रेरित रही है, जो दिव्यांगजनों को 'सक्षम' बनाने के बजाय उन्हें 'निर्भर' बनाती है। उन्होंने यह भी विश्लेषण किया कि राज्य और नागरिक समाज के बीच समन्वय की कमी दिव्यांगजन हितैषी योजनाओं की प्रभावशीलता को बाधित करती है।

बिहार के संदर्भ में उपलब्ध साहित्य सीमित है, परंतु कुछ महत्वपूर्ण योगदान जैसे कि **Das & Singh (2020)** का अध्ययन, राज्य में दिव्यांग कल्याण योजनाओं के जमीनी क्रियान्वयन में मौजूद चुनौतियों पर रोशनी डालता है। इस अध्ययन में यह स्पष्ट हुआ कि अधिकांश लाभार्थियों को योजनाओं की जानकारी नहीं होती, और प्रमाणन की प्रक्रिया में भ्रष्टाचार व जटिलता विद्यमान है।

इसी प्रकार, **NSSO (76th Round, 2018)** और **Census 2011** के आंकड़े बिहार में दिव्यांगजनों की निम्न साक्षरता दर, रोजगार में भागीदारी की कमी, और सार्वजनिक सेवाओं में समावेशन के अभाव को रेखांकित करते हैं। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में पुनर्वास केंद्रों की अपर्याप्तता और सहायक उपकरणों की अनुपलब्धता बड़ी चिंता का विषय है।[10]

Jha (2022) ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया कि बिहार में विकलांगता को अभी भी करुणा और दया की दृष्टि से देखा जाता है, जिससे नीतिगत चर्चाओं में उनका अधिकार-आधारित दृष्टिकोण नगण्य रह जाता है। उनके अनुसार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और शिक्षा में समावेशन को लेकर गंभीर खामियाँ बनी हुई हैं।

हालांकि राष्ट्रीय स्तर पर *Rights of Persons with Disabilities Act, 2016* और *UDID परियोजना* जैसे प्रयास हुए हैं, बिहार जैसे राज्य में इनका वास्तविक प्रभाव अभी तक अपर्याप्त रहा है। NGO की भूमिका की चर्चा तो होती है, परंतु उस पर गहराई से अध्ययन कम हुए हैं।[11]

इस प्रकार उपलब्ध साहित्य यह संकेत करता है कि यद्यपि दिव्यांगजनों की स्थिति पर कुछ महत्त्वपूर्ण अध्ययन हुए हैं, फिर भी बिहार जैसे राज्य में, विशेष रूप से *सरकारी बनाम गैर-सरकारी संस्थानों की भूमिका की तुलनात्मक समीक्षा* और *दिव्यांगजनों के अनुभवजन्य दृष्टिकोण* पर केंद्रित शोध की स्पष्ट कमी है। यह शोध इन्हीं रिक्तियों को भरने का प्रयास करता है।

निष्कर्ष एवं चर्चा:

योजनाओं की पहुँच में संरचनात्मक बाधाएँ और प्रशासनिक जड़ता:

इस अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से सामने आया कि बिहार में दिव्यांगजन सशक्तिकरण के लिए संचालित कई प्रमुख योजनाएँ जैसे — छात्रवृत्ति योजना, UDID कार्ड वितरण, दिव्यांग पेंशन योजना, ट्राईसाईकिल एवं कृत्रिम अंग वितरण, और दिव्यांग पुनर्वास केंद्रों की स्थापना — अपनी संकल्पनात्मक संरचना में सराहनीय हैं, परंतु नीति और ज़मीनी स्तर के बीच गहरा अंतर मौजूद है।

साक्षात्कारों से यह ज्ञात हुआ कि कई लाभार्थियों ने योजनाओं की जानकारी केवल व्यक्तिगत संपर्कों या NGO की मदद से प्राप्त की; पंचायत या सरकारी सूचना केंद्रों की भूमिका लगभग नगण्य रही। उदाहरणस्वरूप, एक लाभार्थी (पटना जिला) ने बताया कि UDID कार्ड के लिए आवेदन प्रक्रिया 6 महीने से अटकी हुई है, क्योंकि चिकित्सीय प्रमाणपत्र एक बार डिजिटल पोर्टल पर अपलोड नहीं हो पाया था। यह दर्शाता है कि डिजिटलीकरण के नाम पर की गई प्रक्रियात्मक जटिलता, योजनाओं की पहुँच को और कठिन बना रही है, खासकर ग्रामीण व अशिक्षित दिव्यांगजनों के लिए।

इसके अतिरिक्त, अनेक लाभार्थियों ने बताया कि उन्हें बार-बार प्रमाणपत्रों को सत्यापित कराना पड़ता है — यह प्रशासनिक जड़ता और जवाबदेही की कमी को उजागर करता है। पुनर्वास केंद्रों की समीक्षा में सामने आया कि अधिकांश केंद्र *संकटग्रस्त वित्तीय स्थिति* से जूझ रहे हैं, स्टाफ की कमी है, और जिला स्तर पर इनकी नियमित निगरानी नहीं होती।

उदाहरण के लिए, गया ज़िले के पुनर्वास केंद्र में ट्राईसाईकिल वितरण शिविर पिछले एक साल से आयोजित नहीं हुआ था, जबकि आवेदन पत्र 100 से अधिक लंबित थे।

यह निष्कर्ष दर्शाता है कि सरकार की योजनाएं 'समावेशिता' के उद्देश्य से बनी तो हैं, परन्तु प्रभावशील क्रियान्वयन के लिए स्थानीय प्रशासन,

स्वास्थ्य विभाग, और समाज कल्याण विभाग के बीच समन्वय की भारी कमी है।

गैर-सरकारी संस्थाओं की भूमिका: संभावनाएं, सीमाएं और दृष्टिकोणगत द्वंद्व:

इस अध्ययन में गैर-सरकारी संस्थाओं (NGOs) की भूमिका की भी गहराई से समीक्षा की गई। फोकस ग्रुप चर्चाओं और NGO संचालकों से साक्षात्कारों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकला कि NGOs, विशेष रूप से स्थानीय व सामुदायिक स्तर पर कार्यरत संस्थाएँ, दिव्यांगजनों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, सामाजिक जागरूकता अभियान, उपकरण वितरण, और सरकारी योजनाओं तक मार्गदर्शन प्रदान करने में अहम भूमिका निभा रही हैं।

हालांकि, यह भी देखा गया कि अधिकतर NGOs की कार्यशैली "सेवा आधारित" या "दया दृष्टिकोण" पर टिकी हुई है, जो कि दिव्यांगजनों को अधिकारयुक्त नागरिक की बजाय सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करती है। इससे न केवल दिव्यांगजनों की आत्मनिर्भरता बाधित होती है, बल्कि उनकी सामाजिक पहचान भी सीमित होती है। NGO प्रतिनिधियों ने माना कि उन्हें सरकारी अनुदानों के लिए लंबा इंतजार करना पड़ता है और कई बार *राजनीतिक हस्तक्षेप* भी सहना पड़ता है।

फिर भी, ऐसे उदाहरण भी सामने आए जहाँ NGOs ने अभिनव प्रयास किए, जैसे कि *मोबाइल सहायता शिविर*, *घर-आधारित शिक्षा कार्यक्रम*, और *दिव्यांग महिला समूहों की स्थापना*। इनसे यह स्पष्ट होता है कि यदि संसाधन व नीति-समर्थन मिले, तो NGOs सामाजिक सशक्तिकरण के प्रभावी एजेंट बन सकते हैं।

सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि और भौगोलिक स्थिति की निर्णायक भूमिका:

यह अध्ययन इस दिशा में भी महत्वपूर्ण निष्कर्ष देता है कि दिव्यांगजनों की सामाजिक स्थिति एकसमान नहीं है। अनुसंधान में यह स्पष्ट रूप से सामने आया कि **जाति, वर्ग, लिंग और स्थान** जैसे कारक दिव्यांगजनों की योजनाओं तक पहुँच, सामाजिक स्वीकृति, और आत्म-प्रतिनिधित्व को गहराई से प्रभावित करते हैं।

विशेषकर अनुसूचित जाति समुदायों में जन्मे दिव्यांगजनों को दोहरे बहिष्कार (Double Marginalization) का सामना करना पड़ता है — एक ओर सामाजिक कलंक के कारण और दूसरी ओर दिव्यांगता के कारण। महिला दिव्यांगजनों के संदर्भ में स्थिति और भी गंभीर है। पटना जिले की एक महिला लाभार्थी ने बताया कि "घर से बाहर निकलने की अनुमति तक नहीं मिलती, योजना की बात तो दूर है।"

ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों में रैम्प, सुलभ शौचालय, ब्रेल सामग्री, और दिव्यांग शिक्षक सहायता जैसे आधारभूत ढाँचे नहीं हैं, जबकि शहरी क्षेत्रों में कुछ संस्थानों ने समावेशी शिक्षा के प्रयास किए हैं। यह भिन्नता दर्शाती है कि राज्य स्तर पर नीति-निर्माण में "स्थानिक विषमता" की पर्याप्त समझ शामिल नहीं है।

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.141 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-13, Issue-2 | November - December 2025

दिव्यांगजनों की आत्म-संगठनात्मक रणनीतियाँ और सामूहिक प्रतिरोध:

हालाँकि अधिकांश योजनाएँ संस्थागत समर्थन पर आधारित हैं, यह अध्ययन यह भी उजागर करता है कि दिव्यांगजन स्वयं भी नवाचार, सामूहिकता, और आत्मनिर्भरता के प्रयोग कर रहे हैं। कई साक्षात्कारों में पाया गया कि लाभार्थियों ने RTI जैसे उपकरणों का प्रयोग कर योजनाओं की जानकारी प्राप्त की और आवेदन प्रक्रिया को तेज किया।

कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में दिव्यांग व्यक्तियों ने *छोटे सामुदायिक समूह बनाए*, जहाँ वे एक-दूसरे को योजना के बारे में जानकारी देते हैं, मदद करते हैं और स्थानीय नेताओं पर दबाव भी बनाते हैं। यह *"निचले स्तर की राजनीतिक चेतना"* को दर्शाता है, जो कि सामाजिक आंदोलनों के बीज बो सकता है।

इसके अलावा, कुछ दिव्यांगजन NGOs के माध्यम से कौशल प्रशिक्षण प्राप्त कर स्वरोजगार में लगे हैं, जैसे – मोमबत्ती बनाना, सिलाई-कढ़ाई, मोबाइल मरम्मत आदि। यह संकेत करता है कि यदि सरकार और संस्थाएं सही मार्गदर्शन व समर्थन दें, तो दिव्यांगजन केवल 'लाभार्थी' नहीं बल्कि 'परिवर्तनकर्ता' की भूमिका निभा सकते हैं।

समेकित विवेचना:

इस शोध की समेकित चर्चा यह दर्शाती है कि बिहार में दिव्यांग सशक्तिकरण की दिशा में *कानूनी और संस्थागत ढांचे तो मौजूद हैं*, लेकिन उनकी प्रभावशीलता, पारदर्शिता और समावेशिता बेहद असमान है। सरकारी योजनाएं केंद्रित, लेकिन क्रियान्वयन में ढीली हैं। गैर-सरकारी संस्थाएं सक्रिय हैं, परंतु संसाधन और अधिकार आधारित दृष्टिकोण की कमी से ग्रस्त हैं। वहीं, दिव्यांगजन स्वयं अपनी सीमाओं से पार पाने के लिए सामूहिकता, नवाचार और रणनीतियाँ विकसित कर रहे हैं।

निष्कर्ष:

यह अध्ययन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि बिहार में दिव्यांगजन सशक्तिकरण को लेकर नीति स्तर पर अनेक योजनाएं, कानून और संस्थागत ढांचे तो मौजूद हैं, परंतु *उनके जमीनी प्रभाव और कार्यान्वयन में गंभीर असमानताएं, बाधाएं और अक्षम समन्वय* व्याप्त हैं। *'Rights of Persons with Disabilities Act, 2016'* और 'UDID परियोजना' जैसे प्रयासों ने समावेशी विकास के लिए एक वैधानिक आधार तो दिया है, परंतु उनका अनुपालन अब भी सतही और सीमित बना हुआ है।

शोध के दौरान यह सामने आया कि अधिकांश दिव्यांगजन — विशेषकर अनुसूचित जाति, ग्रामीण, और महिला लाभार्थी — योजनाओं की जानकारी से वंचित हैं, आवेदन प्रक्रिया जटिल है, और प्रशासनिक व्यवहार में पारदर्शिता और संवेदनशीलता का घोर अभाव है। सरकारी तंत्र में विकेंद्रीकरण के अभाव ने पंचायती राज संस्थाओं को योजनाओं के कार्यान्वयन से काट रखा है, जिससे योजनाएं "शहरी-केन्द्रित" और "सूचनात्मक रूप से विशिष्ट वर्गों तक सीमित" हो जाती हैं।

वहीं दूसरी ओर, गैर-सरकारी संस्थाएँ दिव्यांगजनों के लिए एक सेतु की भूमिका निभा रही हैं, परंतु संसाधनों, दृष्टिकोणगत परिपक्वता, और नीति-समर्थन की कमी ने उनकी क्षमता को सीमित कर

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.141 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-13, Issue-2 | November - December 2025

दिया है। कुछ संस्थानों में नवाचार और सामुदायिक संगठनात्मक प्रयास सकारात्मक संकेत देते हैं, किंतु उन्हें स्थायित्व, विस्तार और संरचनात्मक सहयोग की आवश्यकता है।

दिव्यांगजनों की आत्म-संगठनात्मक रणनीतियाँ और सामूहिक जागरूकता इस बात का प्रमाण हैं कि यदि उन्हें *जानकारी, प्रशिक्षण और मंच* उपलब्ध कराया जाए, तो वे न केवल योजनाओं के निष्क्रिय लाभार्थी, बल्कि *सक्रिय नागरिक* और *नीति-प्रभावितकर्ता* भी बन सकते हैं।

अतः यह अध्ययन केवल योजनाओं की समीक्षा नहीं, बल्कि *दृष्टिकोण, दृष्टि और वितरण की राजनीति* का भी विश्लेषण प्रस्तुत करता है। दिव्यांगता को करुणा के बजाय *अधिकार, समानता और भागीदारी* के चश्मे से देखने की आवश्यकता है — तभी हम सच्चे अर्थों में समावेशी समाज की दिशा में बढ़ सकेंगे।

नीति सुझाव:

प्रशासनिक सुधार और प्रक्रियाओं का सरलीकरण

- **UDID कार्ड प्रणाली** को ऑफलाइन विकल्प के साथ सरल बनाया जाए; प्रमाणन प्रक्रिया में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (PHC) को अधिकृत कर दूरस्थ क्षेत्रों में पहुँच बढ़ाई जाए।
- योजनाओं की **ट्रैकिंग प्रणाली पारदर्शी और लाभार्थी केंद्रित** हो, जिससे लाभार्थी अपने आवेदन की स्थिति देख सके।

विकेंद्रीकृत और सहभागी कार्यान्वयन:

- पंचायती राज संस्थाओं को योजनाओं की **पहचान, चयन और वितरण प्रक्रिया** में औपचारिक रूप से जोड़ा जाए।
- **ब्लॉक और ग्राम स्तर पर दिव्यांग मित्र (Disability Facilitator)** की नियुक्ति हो, जो मार्गदर्शन और शिकायत समाधान सुनिश्चित करे।

गैर-सरकारी संस्थाओं के साथ साझेदारी मजबूत की जाए:

- NGOs के लिए **सरल अनुदान प्रक्रिया** तैयार की जाए; स्थानीय संस्थाओं को प्राथमिकता दी जाए।
- NGOs को **मान्यता प्राप्त प्रशिक्षण प्रदाता** बनाकर पुनर्वास, रोजगार, और शिक्षा से जोड़ने के लिए सरकार सहयोग करे।

सामाजिक दृष्टिकोण और सार्वजनिक जागरूकता अभियान:

- दिव्यांगता को *'विकृति नहीं, विविधता'* के रूप में प्रस्तुत करने हेतु **राज्यव्यापी मीडिया अभियान** चलाए जाएं।
- विद्यालयों और शिक्षक प्रशिक्षण में *दिव्यांगता-संवेदनशीलता* को अनिवार्य पाठ्यक्रम के रूप में शामिल किया जाए।

महिला और दलित दिव्यांगजनों पर विशेष ध्यान:

- **दिव्यांग महिलाओं के लिए विशेष छात्रावास, कौशल केंद्र, और स्वास्थ्य योजनाएं** चलाई जाएं।
- अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के दिव्यांगजनों की जरूरतों को केंद्रित करके **वर्ग-विशिष्ट योजनाएं** विकसित की जाएं।

डेटा प्रणाली और निगरानी तंत्र का सशक्तीकरण:

- जिला स्तर पर एक **'Disability Dashboard'** विकसित किया जाए, जिसमें लाभार्थियों, योजनाओं, उपकरणों और प्रशिक्षण की जानकारी अद्यतन हो।
- योजनाओं की **स्वतंत्र सामाजिक ऑडिट प्रणाली** विकसित हो, जिसमें दिव्यांगजन स्वयं भाग लें।

संदर्भ सूची:

1. अडलक्खा, रैना. (2009). *भारत में विकलांगता की पुनर्व्याख्या: पहचान और नागरिकता के प्रश्न*. इंडियन जर्नल ऑफ जेंडर स्टडीज, 16(2), 191–222. https://doi.org/10.1177/097152150901600201
2. भारत सरकार. (2011). *जनगणना 2011: विकलांगता पर आँकड़े*. भारत के रजिस्ट्रार जनरल और जनगणना आयुक्त, गृह मंत्रालय। https://censusindia.gov.in
3. दास, राकेश एवं सिंह, मनीष. (2020). *बिहार में दिव्यांगजन कल्याण योजनाओं के कार्यान्वयन की चुनौतियाँ*. इंडियन जर्नल ऑफ सोशल वर्क, 81(2), 215–231.
4. झा, प्रीति. (2022). *विकलांगता, विकास और राज्य: उत्तर भारत का एक अध्ययन*. नई दिल्ली: सेज प्रकाशन।
5. संयुक्त राष्ट्र. (2006). *विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र अभिसमय (CRPD)*. संयुक्त राष्ट्र महासभा। https://www.un.org/disabilities/documents/convention/convoptprot-e.pdf
6. दुर्कहाइम, एमिल. (1895). *समाजशास्त्रीय विधियों के नियम*. लंदन: मैकमिलन पब्लिकेशन।
7. भारत सरकार. (1995). *दिव्यांग व्यक्तियों (समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995*. विधि एवं न्याय मंत्रालय, नई दिल्ली।
8. शेक्सपियर, टॉम. (2006). *विकलांगता: अधिकार और अन्याय*. लंदन: रूटलेज। https://doi.org/10.4324/9780203647413
9. घई, अनीता. (2002). *भारतीय संदर्भ में विकलांगता: उपनिवेशोत्तर दृष्टिकोण*. एम. कॉर्कर एवं टी. शेक्सपियर (संपा.) की पुस्तक *डिसएबिलिटी/पोस्टमॉडर्निटी* (पृष्ठ 88–100) में। लंदन: कंटिनुअम।
10. राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSSO). (2018). *भारत में दिव्यांगजन: एनएसएस 76वाँ चक्र (जुलाई-दिसंबर 2018)*. सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार।
11. भारत सरकार. (2016). *दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम, 2016*. सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय। https://disabilityaffairs.gov.in